संपादकीय जागरण

मंगलवार, 30 अक्टूबर, 2018 : कार्तिक कृष्ण 6 वि. 2075

प्रसन्नता एक मानसिक अवस्था है

अनिर्णय की घड़ी

यह घोर निराशाजनक है कि जब अयोध्या मामले की सुनवाई दिन-प्रतिदिन होने की उम्मीद की जा रही थी तब उसे अगले साल जनवरी तक टाल दिया गया और वह भी इस तरह कि इस मामले का जल्द समाधान चाह रहे लोगों को अगली तारीख भी नहीं मिली। जनवरी में सुप्रीम कोर्ट की नई पीठ यह तय करेगी कि इस मामले की सुनवाई कब हो। मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता वाली पीठ की ओर से जिस तरह कहा गया कि यह संबंधित पीठ ही तय करेगी कि मामले की सुनवाई जनवरी, फरवरी, मार्च या अप्रैल में कब होगी उससे तो यही लगा कि इस विवाद का जल्द समाधान प्राथमिकता में ही नहीं। क्या इसकी अनदेखी की जा सकती है कि अयोध्या पर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले पर रोक लगाए हुए सात साल बीत चुके हैं और फिर भी मामला का जहां का तहां ही दिख रहा है? यह एक विडंबना ही है कि जिस मामले की सुनवाई यथाशीघ्र होनी चाहिए उसमें शीघ्र न्याय की कोई सूरत नहीं बन रही है। निःसंदेह अन्य अदालतों की तरह उच्चतम न्यायालय भी मुकदमों के बोझ से दबा हुआ है, लेकिन क्या यह आदर्श स्थिति है कि तीन सदस्यीय पीठ केवल यह सूचना देने के लिए बैठे कि मामले की सुनवाई नई पीठ करेगी? इससे इन्कार नहीं कि सुप्रीम कोर्ट दीवाली अवकाश के बाद शीत अवकाश से भी दो-चार होगा, लेकिन अयोध्या मामले की सुनवाई टलने से तो उन्हीं लोगों की मुराद पूरी हुई जो इस मामले को अगले आम चुनाव तक टाल देने की दलीलें दे रहे थे। यह एक दुर्योग हो सकता है, लेकिन यह भी एक हकीकत है कि कुछ लोगों की दिलचस्पी इसमें है कि अयोध्या मसला अनसुलझा ही बना रहे।

जो मामला पूरे देश के लिए गहन दिलचस्पी का है उसमें यह ठीक नहीं कि फैसले की घड़ी और दूर खिसकती जाए। किसी मामले में जरूरत से ज्यादा देर हो तो उसे अंधेर ही कहा जाता है। इस पर हैरत नहीं कि अयोध्या विवाद की सुनवाई टलने के बाद ऐसे स्वर और सुनाई दिए कि अब कानून का सहारा लिया जाना चाहिए। अयोध्या विवाद के निपटारे में देरी के चलते लोगों की बेचैनी बढ़ना स्वाभाविक है, लेकिन व्यग्र हो गए लोग यह ध्यान रखें तो बेहतर कि जब कोई मामला सबसे बड़ी अदालत के समक्ष हो तब उस पर कानून बनाने की अपनी कठिनाइयां हैं। एक तो विपक्ष के सहयोग के बिना ऐसा कोई कानून बनना संभव नहीं जो अयोध्या में राम मंदिर निर्माण का रास्ता साफ करे और यदि वह बन भी जाए तो उसे अदालत में चुनौती दी जा सकती है। इससे मामला वहीं पहुंचेगा जहां अटका है। ऐसे में यही उचित है कि सुप्रीम कोर्ट के फैसले की प्रतीक्षा की जाए। इसके साथ ही इसके लिए भी कोशिश होनी चाहिए कि अयोध्या विवाद का समाधान आपसी सहमति से निकल आए। यदि ऐसी कोई कोशिश ईमानदारी से हो सके तो अयोध्या मामले की सुनवाई टलने को एक अवसर में तब्दील किया जा सकता है। अच्छा होगा कि वे लोग आगे आएं जो यह चाहते हैं कि अयोध्या में राम मंदिर का निर्माण सद्भाव का नया अध्याय लिखे।

मंत्रियों की जवाबदेही

आश्चर्य है कि संविधान की शपथ लेकर मंत्रीपद धारण करने वाले वरिष्ठ नेताओं की जवाबदेही तय करने की जरूरत महसूस की जा रही है। ऐसा शायद इसलिए है क्योंकि भाजपा नेतृत्व की सर्वोच्च प्राथमिकता अगला लोकसभा चुनाव है। इसके लिए ही मंत्रियों की जवाबदेही तय की जा रही है। जहां तक मंत्रियों की उनके विभागों से संबंधित परफॉरमेंस का सवाल है, इसके लिए न तो कोई जवाबदेही तय है और न परफॉरमेंस मॉनीटरिंग की कोई प्रणाली। बेहतर होता कि भाजपा नेतृत्व सांगठनिक दायित्व के साथ विभागीय कामकाज के बारे में भी मंत्रियों की जवाबदेही निर्धारित करता तो पार्टी के साथ-साथ आम आदमी के लिए भी अच्छे नतीजे मिलते। यदि मंत्री अपनी भूमिकाओं का संतोषजनक ढंग से निर्वहन करें तो इससे सरकार और पार्टी के बारे में अच्छी धारणा बनेगी।

मंत्रियों को हर स्तर पर जिम्मेदार और जवाबदेह बनाकर ही जनता का दिल जीता जा सकता है

विडंबना है कि सरकार की परफॉरमेंस संबंधी धारणा अकेले मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की ही परफॉरमेंस के आधार पर विकसित हो रही है क्योंकि करीब पौने दो साल के शासनकाल में कोई भी मंत्री परफॉरमेंस के बल पर स्वतंत्र पहचान बना पाने में सफल नहीं हुआ। यह चिंताजनक स्थिति है। लोकसभा चुनाव की फिक्र छोड़ दी जाए तो विधानसभा चुनाव में तीन साल से अधिक वक्त बाकी है। मुख्यमंत्री को मंत्रियों के कामकाज की गहन समीक्षा करनी चाहिए। यदि कुछ मंत्रियों को मंत्रिमंडल से बाहर करने या विभाग बदलने की जरूरत महसूस होती है तो इसमें भी संकोच नहीं करना चाहिए। मंत्रियों की उपलब्धता को लेकर आम शिकायत है। चिंता की बात है कि योगी सरकार के कई वरिष्ठ मंत्री भी आम नागरिकों से मिलने में रुचि नहीं रखते। मंत्रियों को हर स्तर पर जिम्मेदार और जवाबदेह बनाकर ही जनता का दिल जीता जा सकता है।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या भारत और जापान मिलकर चीन को कड़ी चुनौती दे सकते हैं?

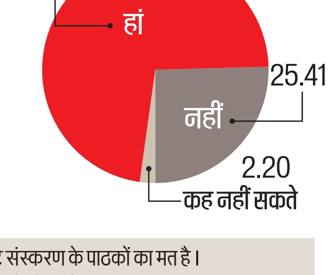

आज का सवाल

क्या सियासी खींचतान के बाद राफेल सौदे के अदालत में जाने से भविष्य के रक्षा सौदे प्रभावित होंगे?

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर **POLL** लिखें, स्पेस देकर **Y, N** या **C** लिखकर 57272 पर भेजें

Y –हां, **N**–नहीं, **C**–कह नहीं सकते

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।
सभी आंकड़े प्रतिशत में।

फर्क लाने वाली शख्सियत

गोपालकृष्ण गांधी

एमजे अकबर मामले में सुषमा स्वराज की खामोशी ने बहुत कुछ कह दिया। ऐसी खामोशियां आगे भी नजर आएं। सुषमाजी की खामोशी ही सही, बोलती रहे

सुषमा स्वराज विदेश मंत्री के रूप में पांच साल पूरे करने जा रही हैं। इस मंत्रालय का पूर्णकालिक प्रभार संभालने वाली वह पहली और इकलौती महिला हैं। अतीत में इंदिरा गांधी भी इसका प्रभार संभाल चुकी हैं, लेकिन तब वह प्रधानमंत्री भी थीं। यह एक ऐसी उपलब्धि है, जिस पर सुषमा गर्व कर सकती हैं, न सिर्फ महिला होने के नाते, बल्कि इसलिए भी कि ऐसे बहुत कम विदेश मंत्री हुए हैं जिन्होंने इतने लंबे समय तक यह पदभार संभाला हो। सुषमाजी में कई ऐसी खूबियां हैं, जिनकी वजह से प्रधानमंत्री मोदी ने उन्हें इस जिम्मेदारी के लिए चुना होगा। उनकी पहली खूबी है उनका स्वाभाविक शिष्टाचार। सुषमाजी का शिष्टाचार उनके व्यक्तित्व, उनके स्वभाव में झलकता है। उनकी दो और खूबियां हैं- उनका हिंदी में धाराप्रवण होना और उनकी मददगार प्रवृत्ति।

हिंदी के मुक्त-विचारक कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की अविस्मरणीय कविता 'बांधो ना नाव' में एक पंक्ति आती है-'सबकी सुनती थी, सहती थी, फिर भी अपने में रहती थी..।' सुषमाजी अपने में रहती हैं। उनका स्वभाव है अपनी भावनाओं को अपने तक सीमित रखना। वह खुद अपने फैसले लेने का अधिकार सुरक्षित रखती हैं। किसी भी तरह के इवेंट्स, संस्थाओं, व्यक्तियों के बारे में उनके अपने स्पष्ट विचार होते हैं। राजनीतिक गतिविधियों के प्रति उनकी अपनी व्याख्या होती है। इसी तरह भाजपा के और दूसरी पार्टियों के नेताओं के बारे में उनका अपना आकलन है। यानी सबकुछ अपने में। उनके स्वभाव में एक अंदरूनी स्थिरता है। यह उनके भीतर का आत्मविश्वास, धैर्य ही है, जो उन्हें शक्ति देता है। वह दूसरों की विचारधाराओं के प्रति खुली सोच रखती हैं। भाजपा के दर्शन के प्रति उनकी निष्ठा अडिग है, लेकिन उनके भीतर कहीं न कही एक सोशल डेमोक्रेट भी छिपा है। इस मामले में उन पर उनके पति स्वराज कौशल का बड़ा प्रभाव लगता है।

वह जिस तरह स्वाभाविक विनम्रता के साथ अपने सियासी विरोधियों से तादात्म्य स्थापित करती हैं, वह मुझे लगता है कि उन्हें उनकी पार्टी के लिए भी एक पहेली बना देता है। वह अपनी पार्टी का प्रतिनिधित्व करती हैं, लेकिन उनका अपना स्वभाव उन्हें गर्मजोश इंसान बनाता है। वह विरोध करती हैं, लेकिन किसी को अपमानित नहीं करतीं या ठेस नहीं पहुंचातीं। उनसे ऐसा होगा ही नहीं। यह उनका स्वभाव ही नहीं है। वह अपनी राजनीतिक आस्थाओं के प्रति किसी को संशय में नहीं रखतीं, किंतु इसके साथ-साथ उनकी राजनीतिक शिष्टता भी संदेह से परे है। वह आज ऐसी व्यवस्था में नैसर्गिक लोकतंत्रवादी हैं, जहां पर भागीदारी के बजाय आज्ञाकारिता का, विशिष्टता के बजाय आंकड़ेबाजी का जोर है। उनकी शब्दावली भले ही 'संघ-शब्दकोश' या उनके स्वजनों से आई हो, किंतु उनकी सोच, उनके विचार 'सुषमा-विचार-कोश' और उनके स्वभाव से आते हैं। वह उनके शिष्टाचार में झलकते भी हैं। तो क्या यह द्वंद्व, यह दुविधा उन्हें परेशान करती है?

अवधेश राजपूत

जरूर करती है। वह भी इंसान हैं, किंतु उन्होंने खुद को इसमें प्रवीण कर लिया है कि अपनी दुविधा को लॉकेट में कैद कर अपने दिल के करीब रख सकें।

जिंदगी में कई ऐसे पल आते हैं, जब व्यक्ति को किसी चीज का चयन करना होता है। चयन करना मुश्किल काम नहीं है, लेकिन कई बार विकल्प स्पष्ट रूप से सामने नहीं आते। कभी-कभार किसी को ऐसी चीज के मध्य भी चयन करना होता है, जो सही है और जो गलत भी नहीं है। एक वाकया याद आता है। 25 वर्षीय केआर नारायणन ने गांधीजी से पूछा कि यदि किसी व्यक्ति से ऐसी दो राहों के बीच चयन करने के लिए पूछा जाए, जिनमें दोनों ही सही हों तो उसे क्या करना चाहिए। उस वक्त नारायणन टाटा स्कॉलरशिप पर लंदन जा रहे थे। उन्हें तनिक असंतुष्टिजनक जवाब मिला। तब उन्होंने गांधीजी से कहा कि लंदन में उनसे हरिजन (उस वक्त तक 'दलित' शब्द चलन में नहीं आया था) समस्या के बारे में जरूर पूछा जाएगा। इसके बाद वह बोले-'यदि इसके बारे में पूछा जाता है तो मुझे एक हरिजन के रूप में जवाब देना चाहिए या एक भारतीय के रूप में? यह असल दुविधा थी।' मेरी याद्दाश्त के मुताबिक तब गांधीजी ने कहा, 'जब आप विदेश में हो तो कहें कि यह भारत की अंदरूनी समस्या है और जब हमारा देश आजाद हो जाएगा तो इस समस्या को भी सुलझा लेगा।' कूटनीतिक अक्लमंदी के लिहाज से गांधीजी द्वारा सुझाए गए इस जवाब से बेहतर जवाब आज विदेश मंत्रालय का सर्वाधिक काबिल ड्राफ्ट्समैन भी पेश नहीं कर सकता।

सुषमाजी को भी प्रायः खुद से ऐसे प्रश्न पूछने चाहिए। मुश्किलों के बीच ऐसी दुविधाओं में उनकी शिष्टता भी कसौटी पर रहती होगी। हाल में संयुक्त राष्ट्र महासभा में उनका भाषण सुनकर लगा कि वह यूएन के बजाय किसी भारतीय सार्वजनिक सभा को संबोधित कर रही हैं। उनके इस भाषण को मैं उनकी उसी विकट दुविधा के उत्पाद के तौर पर देखता हूं-उनके शिष्टाचार का कर्म और उनके स्वभाव का धर्म।

मैं सुषमाजी को लगभग बीस साल से जानता हूं और इस नाते मैं उनकी शिष्टता और उनके स्वभाव दोनों की सराहना करता हूं। उन्होंने अपनी दुविधा और द्वंद्व को जिस परिपक्वता, धैर्य और सफलता से साधा है, उसके लिए मैं उनका सम्मान करता हूं, लेकिन मैं यहां अपनी बातों को कुछ और विचारों के साथ विराम देना चाहूंगा, जो उनके परे, एक व्यक्ति के परे जाते हैं। हमारा संविधान राजनीतिक दलों का जिक्र नहीं करता। इसे इसी तरह तैयार किया गया था। इसकी विषयवस्तु में दलों का हवाला तब जाकर आया, जब संशोधन द्वारा एक दल से दूसरे दल में जाने का विषय इसमें जोड़ा गया। इसका क्या आशय है? आशय यह है कि हमारे सांसदों/मंत्रियों को अपने विचारों और चेतना के साथ एक स्वतंत्र व्यक्ति होना चाहिए। उन्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि उनके भी अपने विचार हैं और हर किसी को (सरकार में हो या विपक्ष में) अपने नेता को अपने विचारों से अवगत कराने से हिचकना नहीं चाहिए। याद करें कि फिरोज गांधी ने मूंदड़ा स्कैंडल के दौरान तत्कालीन वित्त मंत्री टीटी कृष्णमाचारी का इस्तीफा मांगने से परहेज नहीं किया था और ऐसा हुआ भी।

खामोशी भी बोलती है। शोरशराबा करने वालों की भीड़ में, जो शांत रहता है, उसकी 'सुनी' जाती है। तंज-उपहास करने वालों की भीड़ में, जो शांत बना रहता है वही फर्क लाता है। एमजे अकबर (जो उनके ही राज्यमंत्री थे) के मामले में सुषमा की खामोशी ने बहुत कुछ कह दिया। उस वक्त वह साफ तौर पर 'अपने में' थीं। ऐसी खामोशियां आगे भी नजर आएं। सुषमाजी की खामोशी ही सही, बोलती रहे। भले ही वह शिष्ट बनी रहें, लेकिन 'विशिष्ट' होने का अपना तरीका भी तलाशें।

(राजनयिक और राज्यपाल रहे लेखक वर्तमान में अध्यापक हैं)

response@jagran.com

सामाजिक बुराई नहीं सभी मान्यताएं

बलबीर पुंज

सबरीमाला का मुद्दा समानता और स्वतंत्रता के अधिकारों से नहीं, बल्कि पारंपरिक अनुष्ठान और विश्वास से जुड़ा है

प्राचीन सबरीमाला मंदिर पर सुप्रीम कोर्ट के निर्णय को एक ओर जहां महिलाओं की स्वतंत्रता और अधिकारों की जीत के रूप में पेश किया जा रहा है वहीं फैसले का विरोध करने वाले वर्ग विशेषकर श्रद्धालुओं को अपराधी माना जा रहा है। यहां तक कि विरोध-प्रदर्शन को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और भाजपा का एजेंडा बताया जा रहा है। आखिर सच क्या है? एक अंग्रेजी दैनिक को दिए साक्षात्कार में केरल के मुख्यमंत्री पी विजयन ने स्पष्ट किया कि सबरीमाला मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों को लागू किया जाएगा और इसमें वह किसी भी विरोध को बर्दाश्त नहीं करेंगे। उनके अनुसार असामाजिक तत्वों और अपराधियों ने भगवान अयप्पा के स्थान को अपना अड्डा बना लिया है। केरल पुलिस अब तक एक हजार से अधिक प्रदर्शनकारियों को हिरासत में लेकर लगभग 440 मामले दर्ज कर चुकी है। अब यहां अपराधी कौन है? क्या वे श्रद्धालु दोषी हैं जो अपनी धार्मिक परंपराओं और मान्यताओं को बदले जाने से आहत हैं और स्वामी अयप्पा के समर्थन में खड़े हैं या फिर महिलाओं का वह समूह है जिसने मंदिर में जबरन घुसने का प्रयास किया। उनके हावभाव से नहीं लगता कि उनमें कोई श्रद्धालु हो।

अयप्पा के भक्तों में महिलाओं की भी भारी संख्या है जिनका विश्वास है कि मंदिर में एक विशेष आयु की महिलाओं के प्रवेश से भगवान अयप्पा की तपस्या भी भंग होगी। क्या कोई भी स्वतंत्रता या संवैधानिक अधिकार-किसी व्यक्ति की आस्था की अनदेखी का विशेषाधिकार दे सकता है? सबरीमाला मंदिर के बाहर हुए प्रदर्शन की जड़ें 28 सितंबर को सर्वोच्च न्यायालय के उस फैसले से जुड़ी हैं जिसमें पांच न्यायाधीशों की खंडपीठ ने 4-1 के बहुमत से सबरीमाला की परंपरा को असंवैधानिक बताकर 10 से 50 वर्षीय महिलाओं के मंदिर में प्रवेश की अनुमति दी थी। निर्विवाद रूप से किसी भी न्यायिक निर्णय के विरुद्ध हिंसक कृत्य भारत की बहुलतावादी, लोकतांत्रिक और पंथनिरपेक्ष छवि के विपरीत है। फिर भी क्या अदालत हर विषय में निर्णय देने में सक्षम है? क्या समस्त धार्मिक अनुष्ठानों और किसी की आस्था को मानवीय कानून समझ सकता है?

मान्यताओं के अनुसार स्वामी अयप्पा नैष्ठिक ब्रह्मचारी थे, इसलिए यहां पुरुषों के अतिरिक्त बालिकाएं जो रजस्वला न हुई हुई हों या वृद्ध महिलाएं जो रजस्वला से मुक्त हो चुकी हों वही इस मंदिर में प्रवेश कर सकती हैं। इसी पर शीर्ष अदालत ने कहा था, 'मासिक धर्म की आड़ लेकर लगाया गया प्रतिबंध महिलाओं की गरिमा के विरुद्ध और अपमानजनक है। अनुच्छेद 25 के अनुसार, भारत में सभी समान हैं।' लगता है न्यायालय इस तथ्य को समझने में विफल रहा कि यह प्रतिबंध सामाजिक नहीं और यह केवल सबरीमाला मंदिर तक सीमित है। देश में भगवान अयप्पा के अन्य मंदिर भी हैं जहां वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी के रूप में स्थापित नहीं हैं, इसलिए वहां सभी महिलाओं का प्रवेश मान्य है। सबरीमाला का मुद्दा किसी समानता और स्वतंत्रता के अधिकारों से नहीं, बल्कि पारंपरिक अनुष्ठान और विश्वास से जुड़ा है। धार्मिक मान्यता है कि सबरीमाला मंदिर में भगवान अयप्पा ब्रह्मचर्य की गंभीर तपस्या करते हैं और वह स्वयं को महिलाओं की उपस्थिति से दूर रखना चाहते हैं। अब यदि कोई श्रद्धालु किसी मंदिर में भगवान के दर्शन का अभिलाषी है, किंतु भगवान की इच्छा क्या है और वह किस रूप में भक्तों से मिलना चाहते हैं उसकी अवहेलना करता है तो क्या वह व्यक्ति सच्चा भक्त माना जाएगा? हिंदू दर्शन में भगवान के किसी भी रूप की प्रतिमा को 'विग्रह' माना जाता है। इसी कारण श्रद्धालु उन्हे जीवंत मानकर किसी सामान्य व्यक्ति की भांति भोग, शयन और स्नान आदि भी कराते हैं। वास्तव में सबरीमाला पर सुप्रीम कोर्ट के निर्णय ने हिंदुओं की मूल पूजा पद्धति को चुनौती दी है जिसमें उनके लिए प्रत्येक प्रतिमा ही साक्षात भगवान है जिनसे भक्त अपने हर संकट को हरने की अपेक्षा रखते है और अनादिकाल से उनकी पूजा करते आ रहे हैं।

स्वाभाविक रूप से यह विरोधियों की अगली दलील होगी कि अगर सबरीमाला मंदिर में भगवान अयप्पा 10-50 आयु वर्ग की महिलाओं को दर्शन नहीं देना चाहते तो इसके प्रमाण क्या हैं? यही वर्ग इस बात को भी प्रमाणित करने की मांग करेगा कि अयप्पा वास्तव में सबरीमाला में उपस्थित हैं भी या नहीं? ऐसे प्रश्नों की अंतहीन श्रृंखला है जिनका उत्तर खोजना अदालत सहित किसी के लिए भी संभव नहीं। निर्णय देने वाली सुप्रीम कोर्ट की पांच सदस्यीय पीठ में केवल जस्टिस इंदु मल्होत्रा ने बहुमत पक्ष से असहमति जताई थी। उन्होंने कहा था, 'देश में पंथनिरपेक्ष माहौल बनाए रखने के लिए गहराई तक जुड़े धार्मिक आस्था के मुद्दों से छेड़छाड़ नहीं की जानी चाहिए। अनुच्छेद 25 के तहत समानता का अधिकार पूजा करने के मौलिक अधिकार की अवहेलना नहीं कर सकता। यह निर्णय सबरीमाला तक सीमित नहीं रहेगा। इसका अन्य धार्मिक स्थलों पर भी दूरगामी प्रभाव पड़ेगा।'

क्या अदालत भविष्य में यह पूछने का साहस कर सकती है कि इस्लाम में महिलाओं को मस्जिदों में मुफ्ती/मौलवी बनाने या फिर नमाज पढ़ाने की इजाजत क्यों नहीं है? इसी तरह कैथोलिक चर्च में महिला पादरियों की नियुक्ति क्यों नहीं होतीं? धार्मिक स्थलों की भांति सभी निजी और सरकारी संस्थानों के अपने कुछ नियम-कायदे होते हैं। गत 24 अक्टूबर को ही सुप्रीम कोर्ट ने एक मामले में सुनवाई के दौरान गोवा और अरुणाचल प्रदेश के मुख्य सचिवों का पक्ष सुनने से इसलिए इन्कार कर दिया, क्योंकि दोनों अदालती मर्यादा के अनुरूप कपड़े पहनकर नहीं आए थे। यह स्थिति तब है जब देश का एक वर्ग पसंदीदा कपड़े पहनने को अपना अधिकार बताता है। अदालत में किस व्यक्ति को कैसे कपड़े पहनने चाहिए, इसका निर्णय जब स्वयं न्यायाधीश ले सकते हैं तब नैष्ठिक ब्रह्मचारी भगवान अयप्पा किन भक्तों को दर्शन देना चाहते हैं, इसका विवेकाधिकार उनसे क्यों छीना जा रहा है?

हमें धार्मिक मान्यताओं और सामाजिक बुराइयों के बीच अंतर करना होगा। अस्पृश्यता, बहु-विवाह, दहेज प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या और तीन तलाक जैसी कुप्रथाएं किसी भी धर्म का हिस्सा नहीं हैं। समाज को इन कुरीतियों से मुक्त करने हेतु संसद और अदालतों के साथ लोगों को भी आगे आना होगा, किंतु जब समाज सुधार के नाम पर धार्मिक स्थलों की परंपराओं और मान्यताओं में कानूनी दखल होगा तो वह सनातन भारत की बहुलतावादी और पंथनिरपेक्ष छवि को चुनौती देने जैसा होगा। मध्य नवंबर में सबरीमाला मंदिर पुनः तीन महीने के लिए खुलेगा और सर्वोच्च न्यायालय 13 नवंबर को सबरीमाला निर्णय के विरुद्ध दाखिल 19 पुनर्विचार याचिकाओं पर सुनवाई करेगा। क्या तब अदालत इन प्रश्नों और अयप्पा श्रद्धालुओं की भावनाओं का संज्ञान लेगी? वह निकट भविष्य में स्पष्ट हो जाएगा।

(लेखक राज्यसभा के पूर्व सदस्य एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

दृष्टिकोण

भावना के अनुरूप ही दृष्टिकोण उपजता है और जैसा दृष्टिकोण बन जाता है, कालांतर में वैसी ही भावनाएं जन्मने लगती हैं। भावनाएं और दृष्टिकोण एक-दूसरे के कारक भी हैं और परिणाम भी। दोनों एक-दूसरे पर आश्रित हैं। एक ही वस्तु के प्रति लोगों के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण हो सकते हैं। एक कथानक के अनुसार छह अंधों द्वारा एक ही हाथी को स्पर्श करने पर हाथी का जो बिंब प्रत्येक के मानस पटल पर उभरता है, वह उनकी दृष्टिकोण भिन्नता को दर्शाता है। पानी से आधे भरे गिलास के प्रति भी लोगों का प्रायः दो तरह का दृष्टिकोण देखने को मिलता है। कुछ लोग उसे आधा भरा देखते हैं तो कुछ लोग उसे आधा खाली। जो जिस भाव से देख रहा होता है, उसे गिलास वैसा ही दिखता है। यह दृष्टिकोण भिन्नता है।

व्यक्तित्व की भिन्नता ही किसी व्यक्ति के उत्थान-पतन का कारण बनती है। सुदृष्टिकोण व्यक्तित्व के गुणों का विकास करता है। वहीं कुदृष्टिकोण व्यक्तित्व के दोषों और विनाश का कारण बनता है। सुदृष्टिकोण अपनी आशामयी प्रवृत्ति के कारण जीवन शक्ति का संचारक और संवाहक बनकर उसे सफल, सुखद, सरस और समृद्ध बनाता है, जबकि कुदृष्टिकोण अपनी निराशावादी प्रकृति के कारण जीवन को निगल लेने वाले अंधकार को नित गहनतर करता जाता है। वह अपने चारों ओर उदासी, भय और कुंठा का वातावरण निर्मित करता रहता है। अवसादों और तनावों के कुहासे में अपने को घेरे रहता है।

सुदृष्टिकोण सक्रिय ऊर्जा सृजित करता है, जिससे कोई भी व्यक्ति न तो अपने को ठगा अनुभव करता है और न ही हताश और न ही अशक्त। प्राणी अपनी इस चिरस्फूर्तता को सुकृत्यों में परिवर्तित करने और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सदैव क्रियाशील रहता है। ऐसे ही ऊर्जावान व्यक्ति नया संसार रचते हैं। उनके प्रयासों से नए-नए आविष्कारों, अनुसंधानों और अन्वेषणों के रूप में सामने आते हैं। ऐसे लोग ही सुरक्षा के कवच गढ़ते हुए सृजन के बीज बोते हैं। उनके ही मार्गदर्शन में उन्नत शिक्षा के फूल खिलते हैं और रचनात्मक शांति की शीतल वायु प्रवाहमान होती है। ऐसे सुदृष्टिकोण संपन्न व्यक्ति ही समाज के आदर्श होते हैं। लोग उनके अनुसरण और अनुकरण से ही अपने जीवन को सार्थक कर धन्य बनाते हैं।

वेद प्रकाश मिश्र

पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

स्थाई मी टू पोर्टल बनाने की दरकार

मी टू में हर तबके को मिले अभिव्यक्ति शीर्षक से प्रकाशित डॉ. एके वर्मा के लेख को पढ़ते समय यौन उत्पीड़न की शिकार कमजोर और गरीब महिलाओं को न्याय दिलाने के लिए कुछ उपायों को भी पढ़ना चाह रहा था, लेकिन लेख इस विषय पर मौन है। अभी तक आर्थिक, सामाजिक और शैक्षणिक रूप से क्षमतावान महिलाओं ने ही इस विषय पर कुछ पुरुषों को बेनकाब किया है, लेकिन मध्यम तथा निम्न वर्ग की महिलाएं जब तक आगे नहीं बढ़ेंगी, तब तक उनका शोषण करने वाले हतोत्साहित नहीं होंगे। हालांकि सामाजिक और आर्थिक क्षमता के अभाव में न्याय पाना बड़ा ही दुष्कर कार्य है, लेकिन इसके लिए सरकार द्वारा एक स्थाई मी टू पोर्टल बनाया जा सकता है ताकि यौन शोषण की शिकार महिलाएं अपनी बात बिना किसी भय के रख सकें। दरअसल मी टू यौन शोषण की शिकार महिलाओं की व्यथा कथा है जिसे आज उसी समाज में उजागर किया जा रहा है जिसके डर से एक समय इसे छिपाया गया था। इसके साथ ही जब तक समाज इस तरह का कृत्य करने वाले व्यक्ति को घृणित नजरों से नहीं देखेगा, उसका अनादर नहीं करेगा और शिकार व्यक्ति या महिला के प्रति आदरणीय दृष्टिकोण नहीं विकसित करेगा तब तक इस पर प्रभावी रोक नहीं लग पाएगी। इस मामले में कानून पीड़ित या पीड़िता की बहुत मदद नहीं कर सकता है।

डॉ. हरिप्रसाद राय, आजमगढ़

आस्था और लिंगभेद की लड़ाई

सबरीमाला मंदिर के संबंध में न्यायालय ने लिंगभेद कानून की रक्षा करते हुए सभी उम्र कि महिलाओं को मंदिर में प्रवेश देने का फैसला सुनाया था। इस फैसले को लागू करना सरकार का काम है, किंतु सरकार को इस बात का डर है कि धर्म आस्था का सैलाब कहीं अराजकता की राह पर न आ जाए, क्योंकि यहां सरकार की जवाबदेही होगी कि वह सभी धर्म कि मान्यताओं का सम्मान करे। एक उम्र तक महिलाओं का मंदिर में प्रवेश वर्जित करने वाला नियम व धार्मिक मान्यता भी अपनी जगह सही है। फिर क्यों कुछ संगठन खुद को चमकाने के चक्कर में लिंगभेद कानून को हथियार बनाकर आपस में लोगों को लड़वा रहे हैं। yvikas.pandit@gmail.com

वोट का दायित्व

किसी सामान को खरीदने से पहले हम उसकी गुणवत्ता की परख जरूर करते हैं जिससे कि खरीदे गए सामान का मानक उच्च दर्जे का हो और वह जल्दी खराब न हो। ठीक इसी प्रकार एक मतदाता को मतदान से पूर्व भी करना चाहिए। ताकि चुनाव के बाद पछताना न पड़े। अपने दायित्व को लोगों को समझाना चाहिए।

नीरज कुमार पाठक, नोएडा

गरीब की दिवाली

दीपावली पर लोग तमाम धन पटाखे और आतिशबाजी पर खर्च कर देते हैं। लेकिन किसी गरीब को खाने के लिए कुछ नहीं देते हैं। जहां वे मौज-मस्ती कर खुशिया मनाते हैं वहीं दूसरी ओर अनेक गरीबों के घरों में अंधेरा छाया रहता है और उनकी दीपावली बिना मिठाई के ही निकल जाती है। हमें गरीबों के घर पर भी खुशियों के दीये जलाने चाहिए।

skcbe9@gmail.com

विराट का कीर्तिमान

भारत-वेस्टइंडीज के बीच खेले गए तीसरे एक दिवसीय क्रिकेट मैच में विराट ने अद्भुत कीर्तिमान स्थापित किया। उन्होंने इस मैच में लगातार तीसरा शतक जड़ा। ऐसा करने वाले वे पहले भारतीय खिलाड़ी बन चुके हैं। विराट प्रत्येक मैच में इतिहास रच रहे हैं। उनकी इस उपलब्धि पर सभी देशवासियों को गर्व है।

सौरभ पाठक, ग्रेटर नोएडा

सरदार पटेल की प्रतिमा

लौह पुरुष के रूप में विख्यात सरदार वल्लभ भाई पटेल का जन्मदिन (31 अक्टूबर) तो प्रति वर्ष आता है, लेकिन इस साल इस दिन की अपनी खास अहमियत है। क्योंकि, इस दिन उनकी 182 मीटर यानी 597 फीट ऊंची दुनिया की सबसे बड़ी मूर्ति राष्ट्र को समर्पित होने जा रही है। सरदार पटेल ताउम्र स्वदेशी और आत्मनिर्भरता के लिए आवाज बुलंद करते रहे। इसमें कोई दो मत नहीं है कि उनकी सूझबूझ और फौलादी इरादों ने ही राजे रजवाडों की जागीर में बंटे, अंग्रेजों के हाथों लुटे- पिटे इस देश को एक राष्ट्र के रूप में खड़ा किया। उनके व्यक्तित्व के इस पहलू का सारा राष्ट्र कायल रहा है। ऐसे में उनकी दुनिया में सबसे बड़ी प्रतिमा भारत में बनना निःसंदेह सभी के लिए गर्व की बात है।

joshi.devendra85@gmail.com

मर्यादा जरूरी

बेशक देश में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है, लेकिन इसे मर्यादा की सीमाओं में बांधना भी अनिवार्य है। राजनीति ऐसा क्षेत्र है जहां अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का सबसे अधिक बेजा इस्तेमाल होता है। अब राजनीति में कई ऐसे नेता हैं जो बिना किसी हिचकिचाहट के कुछ भी बोल जाते हैं, ऐसे बयानवीर नेता सभी राजनीतिक पार्टियों में मौजूद हैं। ताजा प्रकरण कांग्रेस नेता शशि थरूर का ही ले सकते हैं। उन्होंने वास्तव में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर शर्मनाक टिप्पणी की है। इस बयान से प्रधानमंत्री पद की गरिमा का हनन तो हुआ ही है साथ ही शिवभक्तों की आस्था को भी गहरी ठेस लगी है।

रणजीत वर्मा, फरीदाबाद

ट्वीट-ट्वीट

श्री शशि थरूर ने प्रधानमंत्री मोदी के लिए बिच्छू की उपमा का इस्तेमाल किया यानी श्री मणिशंकर अय्यर, श्री कपिल सिब्बल व श्री दिग्विजय सिंह के सफल प्रयोग के बाद प्रस्तुत है भाजपा के समर्थन में एक और स्टार कैंपेनर!

कुमार विश्वास@DrKumarVishwas

संघ परिवार ने न तो राम मंदिर और न ही सबरीमाला मुद्दे को जन्म दिया, बल्कि ये दोनों ही आंदोलन हिंदुओं में उत्पीड़न भाव से उपजे हैं। बड़ा सवाल यही है कि आखिर ऐसी स्थिति उत्पन्न ही क्यों हुई?

स्वदेश सिंह@swadesh171

जो लोग सबरीमाला के विमर्श में सती प्रथा की दलील देते हैं तो उनसे आदरपूर्वक कहना चाहूंगा कि अधिकांश हिंदुओं में यह कुप्रथा नहीं थी। मध्यकालीन भारत में यह केवल कुछ इलाकों तक सीमित थी। रामायण या महाभारत काल में विधवाओं का उल्लेख है, किसी सती का नहीं।

अमीश@authoramish

रोहित शर्मा लाजवाब हैं, लेकिन अंबाती रायुडू की बल्लेबाजी देखकर बहुत खुशी मिली। उनका रिकॉर्ड शानदार रहा है और अगर कुछ नाटकीय नहीं घटता तो विश्व कप के लिए मध्यक्रम में चार नंबर पर वही फिट बैठेंगे जिसके लिए टीम प्रबंधन तमाम प्रयोग कर रहा है।

मोहम्मद कैफ@MohammadKaif

जनपथ

होंगे सुप्रिम कोर्ट में सभी जरूरी काम,
पर लटकाए जायंगे अपने प्रभुवर राम।
अपने प्रभुवर राम बहाने लेकर सत्तर,
इस सेक्युलर बारात न सच का एक पुछ्त्तर।
बाबर का हित साध रहे जब काले चोंगे,
तो घर में आसीन राम जाने कब होंगे!

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा जागरण प्रकाशन लि. के लिए डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित एवं 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित, संपादक (दिल्ली एनसीआर) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No 50755/90 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त। वर्ष 29 अंक 105